[2013] 7 एससीआर. 420

राजाराम प्रसाद यादव

बनाम

बिहार राज्य व अन्य

(आपराधिक अपील संख्या 830/2013)

04 जुलाई, 2013

[टीएस. ठाकुर और फकीर मोहम्मद इब्राहिम कलीफुल्ला, जे.जे.]

आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973:

धारा 311- एक गवाह की पुनः परीक्षा करने की अदालत की शक्ति- धारा 311 के तहत एक आवेदन पर विचार करते समय पालन किए जाने वाले सिद्धांत- अभिनिर्धारित किया गया कि- तत्काल मामले में, शिकायतकर्ता के पुनः परीक्षण के लिए किया गया आवेदन प्रमाणिक नहीं है- विचारण न्यायालय को साक्ष्य प्रस्तुत करते समय शिकायतकर्ता के आचरण पर निरीक्षण करने का अवसर मिला जिसमें उसे निष्कर्ष पर पहुचने के लिए प्रेरित किया और उसके द्वारा पारित आदेश की शुद्धता की जांच करते समय यह अधिक विश्वसनीयता का हकदार था- विचारण

न्यायालय के आदेश में किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता नही थी। अपीलार्थी के पीछे-मुकदमा तेजी से पूरा किया जाएगा- धारा 138 साक्ष्य अधिनियम, 1972।

दूसरे प्रतिवादी ने दिनांक 08-07-1999 को एक लिखित शिकायत प्रस्तुत की जिसमें, यह आरोप लगाया कि दिनांक 07.07.1999 को एक निर्माण को लेकर उसके और उसके भाई के बीच विवाद हुआ और उसके भाई के कहने पर उसके बेटे (अपीलार्थी) ने गोली चला दी, जिसके बाद उसे इलाज के लिए अस्पताल ले जाया गया। अपीलकर्ता और उसके पिता के खिलाफ अपाध अंतर्गत धारा 324,307 सपठित धारा 34 भा.द.स. के तहत दण्डनीय अपराध के लिए आरोप प्रत्र दायर किया गया था। प्रकरण में, दूसरे प्रतिवादी को दिनांक 16.03.2007 को पीडब्लू-9 के रूप में परिक्षीत किया गया और दिनांक 04-04-2017 को साक्ष्य अभियोजन बंद की गई। इस बीच, एक और विवाद हुआ, एक तरफ दूसरे प्रतिवादी (पीडब्लू9) और उसके बेटे के बीच एवं दूसरी तरफ अपीलकर्ता और उसके पिता के बीच।

राजाराम प्रसाद यादव बनाम बिहार राज्य व अन्य, 421

उक्त घटना में, अपीलार्थी के पिता की पिटाई किए जाने की बात कही गई थी। इसके परिणामस्वरूप आपराधिक प्रकरण संख्या 78/2007 में एफआईआर दर्ज की गई। इसके बाद दूसरे प्रतिवादी ने दिनांक 24.8.2007, को धारा 311 सीआरपीसी ने याचिका दायर की एवं उसकी पुनः परीक्षा

किए जाने की अनुमति मांगी। इसी तरह अतिरिक्त लोक अभियोजक द्वारा दिनांक 05-12-2007 को याचिका दायर की गई थी। विचारण न्यायालय ने दोनों याचिकाओं को खारिज कर दिया। हालाँकि, उच्च न्यायालय ने दूसरे प्रतिवादी की प्रार्थना को स्वीकार कर लिया।

अपील को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि:

1.1 धारा 311, सीआरपीसी के तहत जब किसी गवाह को बुलाने या पहले से परीक्षित किए गए किसी भी गवाह को वापस बुलाने या फिर से पुनः परीक्षण करने का प्रश्न आता है तो न्यायालय को सबसे अधिक शक्तियों प्रदान की जाती है। यह बात साफ है। "अदालत" के पूर्व-निर्धारण के रूप में उपयोग की जाने वाली अभिव्यक्ति "कोई भी" से," "जांच", "मुकदमा", "अन्य कार्यवाही", "गवाह के रूप में व्यक्ति", "उपस्थित व्यक्ति हालांकि गवाह के रूप में तलब नहीं किया गया है", और "पहले से ही जांच किया गया व्यक्ति" हैं। धारा 138 साक्ष्य अधिनियम, न्यायालय में एक गवाह की परीक्षा के क्रम को निर्धारित करती हैं, जो आवश्यक रूप से धारा 311 सीआरपीसी में निहीत पर्चे के अनुरूप होना चाहिए। धारा 311 सीआरपीसी की शक्ति का प्रयोग किसी भी न्यायालय द्वारा अपने समक्ष संहिता के अधीन शुरू की गई किसी भी जांच में या विचारण में या किसी अन्य कार्रवाही में किसी व्यक्ति को गवाह के रूप में बुलाने या उपस्थित किसी व्यक्ति की परीक्षा करने के उदेश्य से, भले ही उसे गवाह के रूप में

बुलाया ना गया हो या वापस बुलाया हो या किसी व्यक्ति को जिसकी पूर्व में परीक्षा हो चुकी हैं, पुनः परीक्षा करने के लिए की जा सकती हैं। [पैरा 14] [431-बी-सी, ई-एच]

1.2 धारा 311 सीआरपीसी सपठित धारा 138 साक्ष्य अधिनियम के आवेदन के प्रार्थना पत्र के संबंध मे सुनवाई के समय इस न्यायालय के विभिन्न न्यायिक निर्णयों मे उदभुत निम्नलिखित सिद्धांतो का न्यायालयो को ध्यान में रखना होगा।

(ए) क्या न्यायालय का यह सोचना सही है कि उसे नए सबूत की आवश्यकता है? चाहे धारा 311 के तहत सबूत की मांग की गई हैं कि न्यायालय को प्रकरण के न्यायपूर्ण निस्तारण के लिए इसकी आवश्यकता हैं।

(बी) धारा 311 सीआरपीसी के तहत व्यापक विवेकाधीन शक्ति का प्रयोग करते हुए यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि निर्णय तथ्यो की असंगत, अनिर्णायक या काल्पनिक प्रस्तुति पर नही दिया जाना चाहिए क्योंकि इससे न्याय का उदेश्य विफल हो जाएगा।

(सी) यदि किसी गवाह का साक्ष्य न्यायालय को मामले के न्यायपूर्ण निर्णय के लिए आवश्यक प्रतीत होता है तो न्यायालय को शक्ति प्राप्त है की वह ऐसे किसी भी व्यक्ति को बुलाए और परीक्षा करे या वापस बुलाए और पुनः परीक्षा करे।

(डी) धारा 311 सीआरपीसी की शक्ति का प्रयोग केवल सत्य को उजागर करने या ऐसे तथ्यों के उचित प्रमाण प्राप्त करने के उदेश्य से किया जाना चाहिए, जिससे मामले का उचित और सही निर्णय हो सके। (ई) उक्त शक्ति के प्रयोग को अभियोजन पक्ष के मामले में एक कमी को भरने के रूप में नहीं करार दिया जा सकता जब तक की मामले के तथ्यो व पस्थितियों से यह स्पष्ट न हो जाए की अदालत द्वारा शक्ति के प्रयोग से अभियुक्त पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पडेगा, जिसके परिणाम स्वरूप न्याय का गर्भपात हो जाएगा।

(एफ) व्यापक विवेकाधीन शक्ति का विवेकपूर्ण ढंग से प्रयोग किया जाना चाहिए और मनमाने ढंग से नहीं।

(जी) न्यायालय को स्वयं को संतुष्ठ करना होगा की मामले के उचित निर्णय पर पहुचने के लिए ऐसे गवाह की परीक्षा करना या उसे आगे की परीक्षा के लिए वापस बुलाना हर तरह से आवश्यक है।

(एच) इसके साथ ही धारा 311 सीआरपीसी का उदेश्य सत्य का निर्धारण करने और उचित निर्णय देने हेतु न्यायालय को कर्तव्य अधिरोपित करना हैं।

(आई) धारा 311 सीआरपीसी के तहत शक्ति का प्रयोग वहा किया जाना चाहिए जहा अदालत इस निष्कर्ष पर पहुचती है की अतिरिक्त साक्ष्य

आवश्यक है, इसलिए नही की उसके बिना निर्णय सुनाना असंभव होगा, बल्कि इसलिए की ऐसे साक्ष्य के बिना न्याय विफल हो जाएगा।

(जे) विवेकाधिकार का प्रयोग करते समय स्थिति की तात्कालिकता, निष्पक्ष व्यवहार, अच्छी समझ (हिफाजत करना) होनी चाहिए। न्यायालय को यह ध्यान मे रखना चाहिए की मुकदमे मे किसी भी पक्ष को त्रुटियों को सुधारने से रोका नहीं जा सकता है और यदि उचित साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है या किसी भी असावधानी के कारण प्रासंगिक सामग्री अभिलेख पर नही लाई है तो अदालत को ऐसी गलतियों की अनुमति देने में उदार होना चाहिए।

(के) अदालत को इस स्थिति के प्रति सचेत होना चाहिए कि आखिरकार मुकदमा मूल रूप से कैदियों के लिए है और अदालत को यथा संभव निष्पक्ष तरीके से उन्हे अवसर देना चाहिए। तर्क की उस समानता में, अभियुक्त की किमत पर संभावित पूर्वाग्रह के खिलाफ अभियोजन की प्रतिरक्षा करने बजाए अभियुक्त को अवसर दिलाने के पक्ष में गलती करना सुरक्षित होगा। न्यायालय को ये ध्यान में रखना चाहिए की ऐसी विवेकाधीन शक्ति का अनुचित या मनमाने ढंग से प्रयोग करने से अवांछनीय परीणाम हो सकते हैं।

(एल) अतिरिक्त साक्ष्य को किसी भी पक्ष के विरूद्ध छद्म रूप में या मामले की प्रकृति को बदलने के लिए प्राप्त नहीं किया जाना चाहिए।

(एम) शक्ति का प्रयोग यह ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए कि जो साक्ष्य प्रस्तुत किए जाने की संभवाना है, वह शामिल मुद्दे के लिए प्रासंगिक होगा और यह भी सुनिश्चित करेगा की दूसरे पक्ष को खण्डन का अवसर दिया जाए।

(एन) धारा 311 सीआरपीसी की शक्ति का प्रयोग न्यायालय द्वारा केवल मजबूत और वैध कारणों से न्याय के उदेश्यों को पूरा करने के लिए लागू किया जाना चाहिए और इसे ध्यानपूर्वक, सावधानी से और एहतियाद के साथ प्रयोग किया जाना चाहिए। न्यायालय को यह ध्यान में रखना चाहिए की निष्पक्ष सुनवाई में आरोपी, पीडित और समाज का हित शामिल है और इसलिए संबंधित व्यक्तियों को निष्पक्ष और उचित अवसर प्रदान करना एक संवैधानिक लक्ष्य होने के साथ साथ एक मानवीय लक्ष्य भी होना चाहिए। [पैरा 23] [438-डी-एच; 439-ए-एच; 440 – ए-जी]

जमातराज केवलजी गोवानी बनाम महाराष्ट्र राज्य 1967 एससी और. 415 = ए. आई. और. 1968 एससी 178; मोहनलाल शामजी सोनी बनाम भारत संघ व अन्य 1991 (1) एससीआर 712 = 1991 पूरक। (1) एससीसी. 271; राज देव शर्मा (ii) बनाम बिहार राज्य 1999 (3) पूरक। एससीआर 124 = 1999 (7) एससीसी 604; दादरा यू. टी. और नगर हवेली व अन्य बनाम फतेहसिंह मोहनसिंह चौहान 2006 (4) पूरक। एससीआर 522 = 2006 (7) एससीसी 529; इद्दार व अन्य बनाम आबिदा

व अन्य 2007 (8) एससीआर 518 = एआईआर 2007 एससी 3029; पी. संजीव राव बनाम स्टेट ओफ एपी 2012 (6) एससी और. 787 = ऐआईआर. 2012 ऐसे.सी. 2242; और शेख जुम्मन बनाम महाराष्ट्र राज्य (2012) 9 एससीएएलई 80 को रेफर किया गया।

1.3 हस्तगत मामले में, उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश पारित करते समय उन प्रमुख उद्देश्यों को पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया है जिनके साथ धारा 311 सीआरपीसी का प्रावधान कानून की पुस्तक में लाया गया है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि अपीलकर्ता जो आपराधिक मुकदमे का सामना कर रहा था, उसे उच्च न्यायालय की कार्यवाही में एक पक्ष के रूप में शामिल नहीं किया गया था, ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने इस पर आदेश पारित कर दिया हैं। उच्च न्यायालय का आदेश दूसरे प्रतिवादी की पुनः परीक्षण करने की मांग में उत्तरदाताओं के आवेदन को खारीज करते समय सत्र न्यायाधीश द्वारा निपटाएगए किसी भी विवाद बिंदु को प्रतिबिम्बित नहीं करता हैं। [पैरा 24] [440-एच; 441 ए-डी]

1.4 विचारण न्यायाधीश ने अभिलिखित किया है कि दिनांक 8.7.1999 को दूसरे प्रतिवादी द्वारा दर्ज की गई शिकायत के विपरित मामला सं. 71/1999 के रूप में दर्ज किया गया था, जिसमें अपराध अंतर्गत धारा 324/307/34 भा.द.स. के साथ सपठित धारा 27 आयुध

अधिनियम में से रिपोर्ट की गई, डॉक्टर की रिपोर्ट के आधार पर, धारा 27 आयुध अधिनियम के आधार पर धारा 324/307/34 भा.द.स. में आरोप पत्र प्रस्तुत हुआ। धारा 27 आयुध अधिनियम का कोई आरोप नहीं लगा, विचारण के दौरान पी.ड.09 (दूसरा प्रतिवादी) से पूछताछ की बारी दिनांक 16-03-2007 को औई, घटना की तारीख से लगभग आठ साल बाद और उसने स्पष्ट रूप से बताया की उसने कभी भी पुलिस को कोई बयान नही दिया था और ना ही उसने ऐसा किया था। घटना की दिनांक को ना ही उसके साथ मारपीट हुई ना ही उसे कोई गोली लगी। आगे उन्होंने साफ कहा की उन्हें जो चोट लगी है, वह गड्डे में गिरने की वजह से लगी है। उन्होंने यह भी स्पष्ट बयान दिया की उनके बेटे पी.ड. 04 व पी.ड.05 घटना स्थल पर मौजूद नहीं थे। [पैरा 25] [441-एफ-एच; 442-ए-बी]

1.5 दूसरे प्रतिवादी का प्रार्थना पत्र जिसमें धारा 311 सीआरपीसी के तहत अनुमति मांगी गई की उसकी दोबरा जांच में कोई प्रमाणिकता नही है। यह बिल्कुल स्पष्ट था की शिकायत, जो बाद की घटना के आधार पर अपीलकर्ता के कहने पर औई थी, जो दिनांक 30-05-2007 को हुई थी और उसके परीणाम स्वरूप प्रकरण सं. 78/2007 में एफ.आई.और. दर्ज की गई थी ऐसा प्रतीत होता है की धारा 311 सीआरपीसी के तहत दूसरा प्रतिवादी आवेदन प्रस्तुत करेगा। विचारण न्यायालय को साक्ष्य प्रस्तुत करते समय दूसरे प्रतिवादी के आचरण का निरीक्षण करने का अवसर मिला जिसने उसे निष्कर्ष पर पहुचने के लिए प्रेरित किया और उसके द्वारा पारीत

आदेश की शुद्धता की जांच करते समय यह अधिक विश्वसनीयता का हकदार था। विचारण न्यायालय का आदेश में किसी प्रकार की हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं हैं। उच्च न्यायालय के आदेश को रद्द कर दिया गया और विचारण न्यायालय के आदेश को बहाल कर दिया गया है। मुकदमा शीघ्रता से पुरा किया जाएगा। [पैरा 29-30] [444 F-H; 445-A, F-G]

संदर्भित न्यायिक निर्णयनः

1967 एससीआर 415	निर्दिष्ट पैरा संख्या 15
1991 (1) एससीआर 712	निर्दिष्ट पैरा संख्या 16
1999 (3) पूरक। एससीआर 124	निर्दिष्ट पैरा संख्या 17
2006 (4) पूरक। एससीआर 522	निर्दिष्ट पैरा संख्या 18
2007 (8) एससीआर 51	निर्दिष्ट पैरा संख्या 19
2012 (6) एससीआर 787	निर्दिष्ट पैरा संख्या 20
(2012) 9 स्केल 80	निर्दिष्ट पैरा संख्या 21

आपराधिक अपील न्यायनिर्णयः आपराधिक अपील सं. 830/2013

उच्च न्यायालय, पटना के प्रकरण सी. और. एल. विविध सं. 12454/2010 में दिनांक 09-12-2010 को पारित निर्णय और आदेश से।

अपीलार्थी की ओर से मोहित कुमार शाह।

उत्तरदाता की ओर से गोपाल सिंह, अनंत शर्मा, अमलान कुमार घोष।

न्यायालय का निर्णय फकीर मोहम्मद इब्राहिम कलीफुल्ला, जे.1 द्वारा दिया गया।

2. यह अपील पटना उच्च न्यायालय के प्रकरण सी. और. एल. विविध सं. 12454/2010 में दिनांक 09-12-2010 को पारित आदेश के खिलाफ निर्देशित है।

3. 2009 के सेशन विचारण नं. 425 में पारित दिनांक 18-11-2009 के संक्षिप्त आदेश द्वारा, विचारण न्यायालय में आपराधिक प्रकिया संहिता की धारा 311 के तहत दायर उत्तरदाताओं द्वारा प्रस्तुत आवेदन को अस्वीकार कर पी.ड.09 मुखबीर को पुनः परीक्षण की अनुमति नहीं दी गई। उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय को निर्देश दिया की वह अपने आदेश दिनांक 09-12-2010 द्वारा दूसरे प्रतिवादी को एक निर्दिष्ट तारीख पर खुद को गवाह के रूप परीक्षित करने की अनुमति दे।

4. संक्षिप्त तथ्यों का वर्णन करने के लिए, दूसरे प्रतिवादी (पीडब्लू-9), ने एक लिखित शिकायत दर्ज की, जिसमें आरोप लगाया गया कि दिनांक 07.07.1999 को शाम को लगभग 5 बजे, उनके घर के सामने उनकी जमीन में शौचालय बनाने को लेकर उनके और उनके भाई बिंदेश्वर यादव के बीच एक विवाद उत्पन्न हुआ और उनके भाई के कहने पर उनका बेटा राजाराम यादव एक देसी पिस्तौल लाया और दूसरे प्रतिवादी

(पीडब्लू-9) पर गोली चला दी, जिसके बाद उसे ईलाज के लिए अस्पताल ले जाया गया।

5. दूसरे प्रतिवादी के कहने पर दिनांक 08-07-1999 की एक शिकायत के आधार पर खिजरसराय पुलिस स्टेशन में प्रकरण सं. 71/99 अंतर्गत धारा 324,307 सपठित धारा 34 भा.द.स. एवं साथ ही धारा 27 आयुध अधिनियम 1959 में प्रकरण दर्ज किया गया, अनुसंधान किया गया और एक चोट प्रतिवेदन रिकॉर्ड पर लाया गया जिसमें डॉ. ने कहा की चोट एक कठोर कुंद पदार्थ से हुई हैं और प्रकृति में एकल थी, यह कहा गया की दूसरा प्रतवादी पी.ड.09 बाद में एक ओर रिपोर्ट हासिल करने में सक्षम था।

6. अपीलार्थी को दिनांक 13.10.1999 को जमानत पर रिहा कर दिया गया। अपीलार्थी और अन्य अभियुक्तों के विरुद्ध प्रकरण सं.127/1999 में दिनांक 31-10-1999 को अपराध अंतर्गत धारा 324,307 सपठित धारा 34 भा.द.स. के तहत आरोप पत्र दायर किया गया। उल्लेखनीय है कि धारा 27 आयुध अधिनियम के तहत कोई आरोप तय नहीं किया गया था। संज्ञान लिया गया और मामला कमीट किया गया और आरोप तय होने के बाद मुकदमा चलाया गया। अन्य गवाहों की परीक्षा के बाद दिनांक 16-03-2007 को दूसरे प्रतिवादी की परीक्षा पी.ड.09 के रूप में की गई।

7. अपनी साक्ष्य में दूसरे प्रतिवादी (पीडब्लू9), ने स्पष्ट रूप से कहा कि उन्होंने कभी पुलिस को कोई बयान नहीं दिया। घटना की तारीख को

किसी ने उसे नहीं पीटा और उसे कोई गोली नहीं लगी थी। उन्होंने अपने साक्ष्य में आगे कहा कि वे देखते हुए दुर्घटनावश शौचालय के छेद में गिर गए और कोई उपकरण जो इसमें छेद के अंदर पड़ा था, उसके शरीर पर चोट का कारण बना। जहाँ तक पीडब्लू4 और पी. डब्ल्यू.5, अर्थात् उनके बेटे बबलू और मुन्ना कुमार के साक्ष्य का सवाल है, दूसरे प्रतिवादी (पी. डब्ल्यू. 9) ने कहा कि वे घटना स्थल पर मौजूद नहीं थे, क्योंकि बबलू हुलासगंज के एक अस्पताल में रह रहा था और मुन्ना कुमार रांची में था। अभियोजन पक्ष की साक्ष्य को दिनांक 04-04-2007 को बंद कर दी गई। उसके बाद, बचाव पक्ष की साक्ष्य शुरू की गई।

8. इस बीच, यह कहा जाता है कि दूसरे प्रतिवादी द्वारा अपीलार्थी के पिता के खेत में निर्मित शौचालय के पानी के बहाव को लेकर एक ओर विवाद उत्पन्न हुआ जिसमें एक तरफ दूसरे प्रतिवादी (पी.ड.09), उसके पुत्र बबलू और दूसरी तरफ अपीलार्थी और उनके पिता थे।

9. उक्त मुद्दे के अनुसरण में यह कहा गया है कि अपीलार्थी के पिता को बांस की लकडियो से पीटा गया, जिससे वह गंभीर रूप से घायल हो गया। उक्त घटना के संबंध में, बिंदेश्वर यादव ने दिनांक 7.6.2007 को पुलिस के समक्ष शिकायत दर्ज कराई, जिसके कारण खिजेरसराय पुलिस थाने में उसी तारीख को प्रकरण सं.78/2007 में एफआईआर दर्ज की गई। इसके बाद दूसरा प्रतिवादी दिनांक 24-08-2007 को प्रथना पत्र अंतर्गत

धारा 311 सीआरपीसी के साथ आया और उसकी दोबारा परीक्षा की इजाजत मांगी। इसी उदेश्य से अपर लोक अभियोजक ने भी उपरोक्त आवेदनो में दिनांक 05-12-2007 को एक याचिका दायर की। विचारण न्यायालय ने दिनांक 18-11-2009 को एक सामान्य आदेश पारित कर दोनो आवेदनो को खारीज कर दिया और मामले को दिनांक 18-12-2009 को अनुसंधान अधिकारी और डॉक्टरों की साक्ष्य के लिए नियत किया। दूसरे प्रतिवादी ने उच्च न्यायालय में यह आपराधिक विविध प्रकरण संख्या 12454/2010 दायर किया, जिसमें उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 09-12-2010 को यह आक्षेपित आदेश पारित किया गया था।

10. हमने अपीलार्थी के लिए विद्वान अधिवक्ता श्री मोहित कुमार शाह और प्रथम प्रतिवादी के लिए विद्वान अधिवक्ता श्री गोपाल सिंह और दूसरे प्रतिवादी के लिए विद्वान अधिवक्ता श्री अमलान कुमार घोष को सुना गया। हमने आक्षेपित आदेश का, साथ ही विचारण न्यायालय के आदेश और अभिलेख पर रखे अन्य सामग्री कागजात का भी अवलोकन किया।

11. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री मोहित कुमार शाह ने अपने दलील में कहा कि विचारण न्यायालय ने दोनों पक्षों को व्यापक रूप से सुनने के बाद एक तर्कपूर्ण आदेश पारित किया, माननीय उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की अनुपस्थिति में आक्षेपित आदेश पारित किया। विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, दूसरे प्रतिवादी ने अपीलार्थी को पक्षकार बनाए बिना

भी, उच्च न्यायालय को आक्षेपित आदेश पारित करने के लिए राजी किया, जो विद्वान अधिवक्ता के अनुसार धारा 311 सीआरपीसी के तहत टिकाऊ नही हैं। विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया कि दूसरे प्रतिवादी खुद से दोबारा पुछाताछ करने की अनुमति देकर अभियोजन पक्ष के मामले में कमीयों को भरने का हर संभव प्रयास किया गया है। जिसे उच्च न्यायालय को अनुमति नहीं देनी चाहिए थी। विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, जब विचारण न्यायालय ने दूसरे प्रतिवादी प्रार्थना के साथ साथ पहले प्रतिवादी की दूसरे प्रतिवादी की दोबारा जांच के लिए प्रार्थना पत्र का विचार करते हुए पक्ष और विपक्ष की जांच की थी और खारिज करने के लिए अच्छी तरह से स्थापित कारण दिए थे। आवेदनो के मामले में उच्च न्यायालय को एक गूढ आदेश पारित कर उसमें हस्तक्षेप नही करना चाहिए था। विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया की आवेदन जिसे उच्च न्यायालय द्वारा अनुमति दी गई थी कष्टप्रद पर था और यह केवल दूसरे प्रतिवादी के दुर्भावनापूर्ण मंसूबो को प्रोत्साहित करेगा ताकि वह अदालत के समक्ष पेश किए गए अपने पहले के संस्करण से बच सके, जिसमें अपीलकर्ता के मामले का पूरी तरह से समर्थन किया हैं।

12. उपरोक्त दलीलों के विपरीत, उत्तरदाताओं के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि किसी उचित निष्कर्ष पर पहुचने के लिए किसी गवाह की परीक्षा या पुनः परीक्षा के लिए धारा 311 सीआरपीसी के तहत न्यायालय में विशाल शक्तियों निहित हैं। न्यायालय द्वारा उक्त शक्ति के अनुशरण में

अपने शक्तियों का प्रयोग किया है, उच्च न्यायालय के आदेश में हस्तक्षेप की आवश्यकता नही है।

13. संबंधित पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और इसमे शामिल मद्दे पर गंभीरता से विचार करने के बाद हम अपीलकर्ता के अधिवक्ता की प्रस्तुति में बल पाते है क्योंकि यह स्वीकार्यता के योग्य है। अपीलकर्ता के रूख की सराहना करने के लिए सीाऔरपीसी की धारा 311 साथा ही साक्ष्य अधिनियम की धारा 138 का संदर्भ लेना उचित होगा। जो नीचे लिया गया हैं।

धारा 311, दंड प्रकिया संहिता

धारा 311. आवश्यक साक्षी का समन करने या उपस्थित व्यक्ति की परीक्षा करने की शक्ति- कोई न्यायालय इस संहिता के अधीन किसी जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही के किसी प्रक्रम में किसी व्यक्ति को साक्षी के तौर पर समन कर सकता है या किसी ऐसे व्यक्ति की, जो हाजिर हो, यद्यपि वह साक्षी के रूप में समन न किया गया हो, परीक्षा कर सकता है, किसी व्यक्ति को, जिसकी पहले परीक्षा की जा चुकी है पुनः बुला सकता है और उसकी पुनः परीक्षा कर सकता है और यदि न्यायालय को मामले के न्यायसंगत विनिश्चय के लिए किसी ऐसे व्यक्ति का साक्ष्य आवश्यक प्रतीत होता है तो वह ऐसे व्यक्ति को समन करेगा और उसकी परीक्षा करेगा या उसे पुनः बुलाएगा और उसकी पुनः परीक्षा करेगा।

धारा 138. भारतीय साक्ष्य अधिनियम

धारा 138. परीक्षाओं का क्रम- साक्षियों से प्रथमतः मुख्य परीक्षा होगी, तत्पश्चात (यदि प्रतिपक्षी ऐसा चाहे तो) प्रतिपरीक्षा होगी, तत्पश्चात (यदि उसे बुलाने वाला पक्षकार ऐसा चाहे तो) पुनः परीक्षा होगी।

परीक्षा और प्रतिपरीक्षा को सुसंग तथ्यों से संबंधित होना होगा, किन्तु प्रतिपरीक्षा का उन तथ्यों तक सीमित रहना आवश्यक नहीं है, जिनकी साक्षी ने अपनी मुख्य परीक्षा में परिसाक्ष्य दिया है।

पुनः परीक्षा की दिशा- पुनः परीक्षा उन बातों के स्पष्टीकरण के प्रति उदिष्ट होगी जो प्रतिपरीक्षा में निर्दिष्ट हुए हों तथा यदि पुनः परीक्षा में न्यायालय की अनुज्ञा से कोई नई बात प्रविष्ट की गई हो, तो प्रतिपक्षी उस बात के बारे में अतिरिक्त प्रतिपरीक्षा कर सकेगा।

14. धारा 311 सीआरपीसी का एक विशिष्ट पठन। यह दिखाएगा की जब किसी गवाह को बुलाने या पहले से ही परीक्षित गवाह को वापस बुलाने या पुनः परीक्षा का सवाल अाता है तो अदालतो के पास व्यापक शक्तियों निहित की गई है। प्रावधान को पढने से पता चलता है की अभिव्यक्ति "कोई भी" का उपयोग "अदालत", "जांच", "विचारण", "अन्य कार्यवाही", "गवाह के रूप में व्यक्ति", "उपस्थित व्यक्ति हालांकि जिसे गवाह के रूप में नहीं बुलाया गया है", "व्यक्ति जिसकी पहले परीक्षा की जा चुकी है" के लिए पूर्व-निर्धारण के रूप में उपयोग किया गया है। अंततः

यह कहा गया है की न्यायालय द्वार संतुष्ठ होने के लिए जो कुछ आवश्यक था वह केवल ऐसे साक्ष्य के संबंध मे था जो न्यायालय को आवश्यक प्रतीत होते हैं। मुकदमे के न्यायोचित निर्णय के लिए धारा 138 साक्ष्य अधिनियम न्यायालय में एक गवाह की परीक्षा का क्रम निर्धारित करती है। ऐसे ही पुनः परीक्षण के लिए वांछित गवाह को बुलाने के लिए पुनः परीक्षण का क्रम भी निर्धारित किया गया है, इसलिए धारा 311 सीआरपीसी व धारा 138 का पठन जहा तक आपराधिक मुकदमे का सवाल है। धारा 138 के तहत किसी भी व्यक्ति की ईच्छा पर पुनः परीक्षण का क्रम आवश्यकत रूप से धारा 311 सीआरपीसी में निहित नुस्खे अनुरूप होना चाहिए। इसलिए यह जरूरी है की सीआरपीसी की धारा 311 को लागू करने और किसी विशेष मामले में इसके आवेदन का आदेश केवल प्रावधान के उदेश्य और प्रयोजन को ध्यान में रख कर ही दिया जा सकता है। अर्थात उचित निर्णय प्राप्त करने के लिए। यह मामले हमारे द्वारा पहले ही नोट किया जा चुका है। उक्त प्रावधान के तहत निहित शक्ति किसी भी व्यक्ति को गवाह के रूप में बुलाने या उपस्थित किसी भी व्यक्ति की जिसे चाहे गवाह के रूप में बुलाया न गया हो या पहले से परीक्षित किसी व्यक्ति को वापस बुलाने या पुनः परीक्षा करने के उदेश्य से संहिता के तहत शुरू की गई जो किसी भी जांच परीक्षण या अन्य कार्यवाही में किसी चरण में किसी भी न्यायालय को उपलब्ध कराई जाती हैं। जहा तक पहले से परीक्षित किसी व्यक्ति काे वापस बुलाने और पुनः परीक्षा करने की बात है तो न्यायालय

के लिए आवश्यक है कि इस पर विचार करें और सुनिश्चित करें की किसी भी व्यक्ति को इस तरह वापस बुलाना और पुनः परीक्षा करना, न्यायालय की नजर में मामले के उचित निर्णय के लिए आवश्यक प्रतीत होता है। इसलिए, सर्वोपरि आवश्यकता सिर्फ निर्णय और उस उदेश्य के लिए किसी व्यक्ति का वापस बुलाने और पुनः परीक्षा करने की अनिवार्यता सुनिश्चित की जानी है। दूसरे शब्दो में कहे तो जबकी, इतनी व्यापक शक्ति न्यायालय के पास है तो यह कहने की आवश्यकता नही है की ऐसी शक्ति का प्रयोग न्यायिक रूप से और अत्यधिक सावधानी और एहतियाद के साथ करना चाहिए।

15. इस संदर्भ में हम सीआरपीसी की धारा 311 की व्याख्या पर इस न्यायालय द्वारा दिए गए कुछ निर्णय का संदर्भ भी देना चाहते हैं। जहा इस न्यायालय में उन बुनयादी सिद्धांतो पर प्रकाश डाला है जिन्हें धारा 311 सीआरपीसी के तहत प्रस्तुत प्रार्थना पत्र पर विचार करते समय ध्यान में रखना चाहिए। जमातराज केवलजी गोवानी बनाम महाराष्ट्र राज्य-ए. आई. और. 1968 एससी 178 में दिए गए फैसले मे, इस न्यायालय ने पैरा सं.14 के तहत अभिनिर्धारित किया

> "14 ऐसा प्रतीत होता है की हमारे आपराधिक क्षेत्राधिकार में, वैधानिक कानून किसी गवाह को बुलाने या अदालत में उपस्थि किसी व्यक्ति की परीक्षा करना या पहले से ही

परीक्षित गवाह को वापस बुलाने के लिए परीक्षण के किसी भी चरण में प्रयोग की जाने वाली पूर्ण शक्ति प्रदान करता है और ऐसा करना न्यायालय का कर्तव्य और दायित्व है। बशर्ते मामले का उचित निर्णय इसकी मांग करे। दूसरे शब्दो में, जहा न्यायालय दूसरे भाग के तहत शक्ति का प्रयोग करता है। वहा परीक्षा यह नही हो सकती की आरोपी अचानक या अप्रत्याशित रूप से कुछ लाया है या नही बल्की यह है की क्या न्यायालय का यह सोचना सही है की मामले के उचित निर्णय के लिए नए साक्ष्य की आवश्यकता है। यदि न्यायालय ने उचित निर्णय की आवश्यकता के बिना कार्य किया है, तो कार्रवाई आलोचना के लिए खुली है, लेकिन यदि अदालत की कार्रवाई सहायत के रूप में समर्थित हैं। एक उचित निर्णय, कार्रवाई को अधिकार क्षेत्र से बाहर नही माना जा सकता।" (जोड दिया गया)

16. बताए गए निर्णय मोहनलाल शामजी सोनी बनाम भारत संघ व अन्य-1991 Suppl.(1) एससीसी 271, में न्यायालय में धारा 311 सीआरपीसी के तहत प्रयोग की जाने वाली शक्ति के महत्व पर पैरा संख्या 10 में फिर से प्रकाश डाला।

"10.....न्यायालय को सच्चाई का पता लगाने और उचित निर्णय देने के लिए सक्षम बनाने के लिए, संहिता की धारा 540 (नई संहिता की धारा 311) के तहत लाभकारी प्रावधान अधिनियमित किए गए है, जिसके तहत कोई न्यायालय अपने विवेकाधिकार का प्रयोग कर के जांच, विचारण या अन्य कार्रवाई के किसी भी प्रक्रम पर किसी भी व्यक्ति को गवाह के रूप में बुलाया जा सकता है या उपस्थित किसी भी व्यक्ति की परीक्षा की जा सकती है। चाहे उसे गवाह के रूप में बुलाया नही गया हो। किसी व्यक्ति को जिसकी परीक्षा की जा चुकी है वापस बुलाया जा सकता है या पुनः परीक्षा की जा सकती हैं, जिससे यह उम्मीद की जाती है की वे प्रकरण में विवादीत मामले पर प्रकाश डालने मे सक्षम होंगे क्योंकि यदि तथ्यो की असंगत, अनिर्णायक और काल्पनिक प्रस्तुति पर निर्णय दिए जाते है तो न्याय का उद्देश्य विफल हो जाएगा।"

17. न्याय निर्णयन राज देव शर्मा (ii) बनाम बिहार राज्य 1999 (7) एससीसी 604, के पैरा सं. 9 में कथनो को निम्नानुसार दोहराया गया हैं।

"9. हम देख सकते हैं कि दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 311 में परीलक्षित न्यायालय की शक्ति को इस न्यायालय द्वारा कम नहीं किया गया है। ना तो ए. और. अंतुले मामले में पाँच न्यायाधीशों की पीठ के निर्णय में और न ही कर्तार सिंह के मामले में त्वरित सुनवाई के लिए ऐसी शक्तियों को प्रतिबंधित किया गया है। दूसरे शब्दो में, भले ही अभियोजन साक्ष्य मुख्य निर्णय में निहित निर्देशो के अनुपालन में बंद कर दिया गया हो, फिर भी अभियोजन पक्ष संहिता की धारा 311 के तहत न्यायालय की शक्तियो को लागू करने के लिए खुला हैं। हम यह स्पष्ट करते है की यदि किसी गवाह का साक्ष्य न्यायालय को मानने के न्यायसंगत निर्णय के लिए आवश्यक प्रतीत होता है तो यह न्यायालय का कर्तव्य है की यह ऐसे किसी भी व्यक्ति को बुलाए और उसकी परीक्षा करे या वापस बुलाए और उसकी पुनः परीक्षा करे।" (जोड दिया गया)

18. न्यायिक निर्णयन दादरा यू.टी. और नगर हवेली व अन्य बनाम फतेहसिंह मोहनसिंह चौहान-2006 (7) एससीसी 529, के पैरा सं.15 में निम्नानुसार स्पष्ट किया गया हैः

"15. ऊपर उल्लिखित अधिकारियों के एक परिपेक्ष से पता चलता है की सिद्धांत अच्छी तरह से स्थापित है की धारा 311 के तहत शक्ति का प्रयोग केवल सच्चाई का पता चलाने या ऐसे तथ्यो का उचित प्रमाण प्राप्त करने के उद्देश्य से किया जाना चाहिए जो मामले के उचित एवं सही निर्णय के लिए हो। यह आपराधिक न्यायालय का प्राथमिक कर्तव्य है की न्यायालय को उचित निर्णय पर पहुचने में सक्षम बनाने के लिए सच्चाई का पता लगाने के उद्देश्य से एक गवाह को बुलाना या पहले से ही परीक्षित गवाह की पुनः परीक्षा करना मामले को "अभियोजन मामले में कमी भरना" नही कहा जा सकता, जब तक की मामले के तथ्यो और परिस्थितियो से यह स्पष्ट न हो जाए की न्यायालय द्वारा शक्ति के प्रयोग से अभियुक्त पर गंभीर प्रतिकुल प्रभाव पडेगा, जिसके परीणाम स्वरूप न्याय की हानि होगी।" (जोड दिया गया)

19. न्यायिक निर्णयन इद्वार व अन्य बनाम आबिदा व अन्य एआईआर 2007 ऐसे सी 3029, में पैरा सं. 11 में धारा 311 सीआरपीसी के तहत अंतर्निहित उद्देश्य निम्नानुसार बताए गए हैः

"11. संहिता की धारा 311 का अंतर्निहित उद्देश्य यह है कि मूल्यवान साक्ष्य को रिकॉर्ड पर लाने में किसी भी पक्ष की गलती के कारण या दोनो

और से परिक्षित गवाहों के बयानो में अस्पष्टता छोडने के कारण न्याय विफल नही हो सकता। निर्धारक कारक यह है की क्या यह मामले के उचित निर्णय के लिए आवश्यक है। यह धारा केवल अभियुक्तो के लाभ तक ही सिमित नही है, और केवल इस धारा के तहत एक गवाह को बुलाने के लिए अदालत की शक्तियों का अनुचित प्रयोग नही होगा क्योंकि साक्ष्य अभियोजन के मामले का समर्थन करती है और अभियुक्त का नहीं। यह धारा एक सामान्य धारा है जो संहिता के तहत सभी कार्रवाईयो, जांचो, विचारणों पर लागू होती है और मजिस्ट्रेट को ऐसी कार्रवाई, जांच, विचारण के किसी भी प्रक्रम पर किसी भी गवाह को समन जारी करने का अधिकार देती है। धारा 311 सीआरपीसी में जो महत्वपूर्ण अभिव्यक्ति होती है, वह है:

> "इस संहिता के तहत जांच या विचारण या अन्य कार्रवाई के किसी भी चरण में। हालांकि यह ध्यान में रखा जाना चाहिए की जबकी धारा गवाह को बुलाने की न्यायालय को व्यापक शक्ति प्रदान करती हैं, प्रदत्त विवेक का उपयोग विवेकपूर्ण तरीके से किया जाना चाहिए। न्यायिक मस्तिष्क के अनुप्रयोग के लिए शक्ति जितनी व्यापक होगी उतनी ही अधिक आवश्यकता होगी।" (जोड दिया गया)

20. न्याय निर्णयन पी. संजीव राव बनाम स्टेट ऑफ ए.पी. ऐआईआर 2012 एससी 2242, में धारा 311 सीआरपीसी का दायरा। मामले

के विशेष संदर्भ के साथ इस न्यायालय के पहले के फैसले का संदर्भ देकर इस पर प्रकाश डाला गया है जो उस फैसले में पैरा सं.13 और पैरा सं.16 में निपटाया गया था, जो निम्नानुसार हैः

> "13. अभियुक्त को अपनी बेगुनाही साबित करने के लिए उचित अवसर प्रदान करना हर निष्पक्ष सुनवाई का उद्देश्य था, इस न्यायालय ने न्यायिक निर्णय हॉफमैन एंड्रियास बनाम इंसपेक्टर ऑफ कस्ट अमृतसर (2000) 10 एससीसी 430 में देखा। इस संबंध में निम्नलिखित रास्ता उचित हैः
>
> "ऐसी परिस्थितियों में, यदि नया अधिवक्ता आवश्यक गवाह की आगे की परीक्षा के बारे में सोचता है, तो न्यायालय न्यायहित में विस्तारपूर्ण और उदार दृष्टिकोण अपनाता है, खासकर जब न्यायालय के पास इस मामले मे संहिता की धारा में निहित शक्तियों हैं। आखिरकार मुकदमा मूल रूप से कैदियो का है और न्यायालय को यथासंभव निष्पक्ष तरीके से उनका विरोध करना चाहिए।"
>
> "16. हम इस तथ्य से अवगत हैं कि गवाहों को वापस बुलाने का निर्देश लगभग चार साल पहले दिया जा रहा है। करीब सात साल पुरानी एक घटना के बारे में मुख्य परीक्षा की गई। विलम्ब मानव मस्तिष्क पर भारी प्रभाव डालने के

अलावा उचित समय के भीतर प्रकरण का निस्तारण करने के लिए न्यायिक प्रणाली की प्रभावकारीता के बारे में संदेह भी पैदा करता हैं। श्री राहुल द्वारा व्यक्त की गई आशंका की देर से वापस बुलाने के कारण अभियोजन पक्ष का पूर्वाग्रह का सामना करना पड सकता है। पूरी से बिना किसी आधार के नही हो सकता है। ऐसा कहने के बाद हमारी राय है की तर्क की समानता पर और गवाहो से जिरह करने के अवसर से इंकार करने के परिणामो को देखते हुए हम अभियोजन पक्ष की रक्षा करने के बजाए अपीलकर्ता को एक अवसर प्राप्त करने के पक्ष में गलती करना पसंद करेंगे। उसकी किमत पर एक संभावित पूर्वाग्रह.....। मुकदमे की निष्पक्षता एक ऐसा गुण है जो हमारी न्यायिक प्रणाली में पवित्र है और उस गुण की रक्षा के लिए कोई भी किमत बहुत बडी नही है। अभियोजन के प्रति संभावित पूर्वाग्रह कोई किमत भी नही है, ऐसी किमत को तो छोड ही दीजिए जो आरोपी को खुद का बचाव करने के लिए उचित अवसर से वंचित करने को उचित ठहराए।" (जोड दिया गया)

21. न्यायिक निर्णय शेख जुम्मान बनाम महाराष्ट्र राज्य-(2012) 9 Scale 80, में इस न्यायालय के हालिया फैसले में, उपरोक्त निर्दिष्ट निर्णयों का पालन किया गया था।

22. न्यायिक निर्णय नताशा सिंह बनाम सी.बी.आई. (राज्य)- आपराधिक अपील सं. 709/2013 में इस न्यायालय द्वारा दिनांक 08.05.2013 को दिए गए एक असूचित निर्णय में, जहा हम मे से एक पक्ष था, इस न्यायालय के कई अन्य निर्णयो का उल्लेख किया गया था और स्थिति पैराग्राफ 14 और 15 में निम्नानुसार बताई गई हैः

> "14. प्रावधान का दायरा और उद्देश्य न्यायालय को मामले के उचित निर्णय पर पहुचने के लिए सभी प्रासंगिक तथ्यो की खोज करने और ऐसे तथ्यो का उचित प्रमाण प्राप्त करने के बाद सच्चाई का निर्धारण करने और उचित निर्णय देने में सक्षम बनाना है। शक्ति को अवश्य ही विवेकपूर्ण तरीके से प्रयोग किया जाना चाहिए ना की अनुचित या मनमाने ढंग से, क्योंकि ऐसी शक्ति के किसी भी अनुचित या मनमाने प्रयोग से आवांछनीय परिणाम हो सकते है। एक प्रार्थना पत्र अंतर्गत धारा 311 सीआरपीसी को केवल अभियोजन या बचाव के मामले में किसी कमी को पूरा करने या अभियुक्त को नुकसान के लिए, या अभियुक्त के बचाव के प्रति गंभीर पूर्वाग्रह पैदा करने या विपक्षी पक्ष को अनुचित लाभ देने की अनुमति नही दी जानी चाहिए। इसके अलावा अतिरिक्त साक्ष्य का दोबारा सुनवाई के लिए या किसी भी पक्ष के खिलाफ मामले की प्रकृति को बदलने के

लिए नही किया जाना चाहिए। ऐसी शक्ति का प्रयोग आवश्य किया जाना चाहिए, बशर्ते कि जो साक्ष्य किसी गवाह द्वारा प्रस्तुत किए जाने की संभावना हो वह संबंधित विवाद के लिए सार्थक हो। हालांकि खण्डन का अवसर दूसरे पक्ष का दिया जाना चाहिए।"

इसलिए धारा 311 सीआरपीसी के तहत प्रदत्त शक्ति न्याय के उद्देश्यो का पूरा करने के लिए, मजबूत और वैद कारणों से ही न्यायालय द्वारा इसे लागू किया जाना चाहिए और इसे बहुत सावधानी और एहतियाद के साथ प्रयोग किया जाना चाहिए।

'किसी भी न्यायालय', 'किसी भी प्रक्रम पर' या 'किसी जांच', 'विचारण या अन्य कार्रवाई', 'किसी भी व्यक्ति और 'ऐसे किसी भी व्यक्ति जैसे शब्दों का प्रयोग स्पष्ट रूप से बताता है की इस बारे में प्रावधान यथासंभव व्यापक शब्दो में व्यक्त किया गया है, और किसी भी तरह से न्यायालय के विवेक को सिमित नहीं करता है। इस प्रकार यदि मामले के उचित निर्णय के लिए ताजा साक्ष्य प्राप्त करना आवश्यक है तो बच निकलने का कोई रास्ता नही है। इसलिए, निर्णायक कारक यह होना चाहिए की क्या उक्त गवाह को बुलाना/वापस बुलाना वास्वत में मामले के उचित निर्णय के लिए आवश्यक है।

15. निष्पक्ष सुनवाई आपराधिक प्रक्रिया का मुख्य उद्देश्य है, और यह सुनिश्चित करना न्यायालय का कर्तव्य है कि ऐसी निष्पक्षता किसी भी तरह से बाधित या खतरे में न हो। निष्पक्ष सुनवाई में अभियुक्त, पीड़ित और समाज के हित शामिल है, और इसलिए निष्पक्ष सुनवाई में संबंधित व्यक्ति को निष्पक्ष और उचित अवसर प्रदान करना शामिल है, और इसे सुनिश्चित किया जाना चाहिए क्योंकि यह संवैधानिक होने के साथ साथ मानव का अधिकार भी हैं। इसप्रकार, किसी भी परिस्थिति में किसी भी व्यक्ति के निष्पक्ष सुनवाई के अधिकार को खतरे में नही डाला जा सकता हैं। बचाव में साक्ष्य प्रस्तुत करना उसका महत्वपूर्ण अधिकार हैं। इस तरह के अधिकार से इनकार करना निष्पक्ष सुनवाई से इनकार करने के बराबर होगा।

इस प्रकार यह आवश्यक है की न्याय सुनिश्चित करने के लिए बनाए गए प्रक्रिया नियमो का ईमानदारी से पालन किया जाए और न्यायालय को यह सुनिश्चित करने में उत्साहित होना चाहिए की इसका कोई उल्लंघन ना हो। (वीडे तालाब हाजी हुसैन बनाम मधुर पुरुषोत्तम मोंडकर व अन्य। ए. आई. और. 1958 एससी 376; ज़हिरा हबीबुल्ला एच. शेख व अन्य बनाम गुजरात राज्य व अन्य। ए.ई.और. 2004 एससी 3114; ज़हिरा हबीबुल्लाह शेख व अन्य बनाम गुजरात राज्य व अन्य, ऐआईआर. 2006 ऐसे.सी. 1367 कल्याणी भास्कर (श्रीमती) बनाम एम.ऐसे.सम्पूर्णम (श्रीमती) (2007) 2 एससी सी. 258; विजय कुमार बनाम उत्तर प्रदेश राज्य व

अन्य,(2011) 8 एससीसी 136 और सुदेवानंद बनाम सी.बी.आई. राज्य की और से (2012) 3 एससीसी 387.)"

23. उपरोक्त निर्णयों के परिपेक्ष में धारा 311 सीआरपीसी के साथ धारा 138 साक्ष्य अधिनियम के तहत एक आवेदन पर विचार करते समय हमें महसुस होता है की न्यायालय को निम्नलिखित सिद्धांतो को ध्यान में रखना होगाः

(ए) क्या न्यायालय का यह सोचना सही है कि उसे नए सबूत की आवश्यकता है? चाहे धारा 311 के तहत सबूत की मांग की गई हैं कि न्यायालय को प्रकरण के न्यायपूर्ण निस्तारण के लिए इसकी आवश्यकता हैं।

(बी) धारा 311 सीआरपीसी के तहत व्यापक विवेकाधीन शक्ति का प्रयोग करते हुए यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि निर्णय तथ्यो की असंगत, अनिर्णायक या काल्पनिक प्रस्तुति पर नही दिया जाना चाहिए क्योंकि इससे न्याय का उदेश्य विफल हो जाएगा।

(सी) यदि किसी गवाह का साक्ष्य न्यायालय को मामले के न्यायपूर्ण निर्णय के लिए आवश्यक प्रतीत होता है तो न्यायालय को शक्ति प्राप्त है की वह ऐसे किसी भी व्यक्ति को बुलाए और परीक्षा करे या वापस बुलाए और पुनः परीक्षा करे।

(डी) धारा 311 सीआरपीसी की शक्ति का प्रयोग केवल सत्य को उजागर करने या ऐसे तथ्यों के उचित प्रमाण प्राप्त करने के उदेश्य से किया जाना चाहिए, जिससे मामले का उचित और सही निर्णय हो सके।

(ई) उक्त शक्ति के प्रयोग को अभियोजन पक्ष के मामले में एक कमी को भरने के रूप में नहीं करार दिया जा सकता जब तक की मामले के तथ्यो व पस्थितियों से यह स्पष्ट न हो जाए की अदालत द्वारा शक्ति के प्रयोग से अभियुक्त पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पडेगा, जिसके परिणाम स्वरूप न्याय का गर्भपात हो जाएगा।

(एफ) व्यापक विवेकाधीन शक्ति का विवेकपूर्ण ढंग से प्रयोग किया जाना चाहिए और मनमाने ढंग से नहीं।

(जी) न्यायालय को स्वयं को संतुष्ठ करना होगा की मामले के उचित निर्णय पर पहुचने के लिए ऐसे गवाह की परीक्षा करना या उसे आगे की परीक्षा के लिए वापस बुलाना हर तरह से आवश्यक है।

(एच) इसके साथ ही धारा 311 सीआरपीसी का उदेश्य सत्य का निर्धारण करने और उचित निर्णय देने हेतु न्यायालय को कर्तव्य अधिरोपित करना हैं।

(औई) धारा 311 सीआरपीसी के तहत शक्ति का प्रयोग वहा किया जाना चाहिए जहा अदालत इस निष्कर्ष पर पहुचती है की अतिरिक्त साक्ष्य

आवश्यक है, इसलिए नही की उसके बिना निर्णय सुनाना असंभव होगा, बल्कि इसलिए की ऐसे साक्ष्य के बिना न्याय विफल हो जाएगा।

(जे) विवेकाधिकार का प्रयोग करते समय स्थिति की तात्कालिकता, निष्पक्ष व्यवहार, अच्छी समझ (हिफाजत करना) होनी चाहिए। न्यायालय को यह ध्यान मे रखना चाहिए की मुकदमे मे किसी भी पक्ष को त्रुटियों को सुधारने से रोका नहीं जा सकता है और यदि उचित साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है या किसी भी असावधानी के कारण प्रासंगिक सामग्री अभिलेख पर नही लाई है तो अदालत को ऐसी गलतियों की अनुमति देने में उदार होना चाहिए।

(के) अदालत को इस स्थिति के प्रति सचेत होना चाहिए कि आखिरकार मुकदमा मूल रूप से कैदियों के लिए है और अदालत को यथा संभव निष्पक्ष तरीके से उन्हे अवसर देना चाहिए। तर्क की उस समानता में, अभियुक्त की किमत पर संभावित पूर्वाग्रह के खिलाफ अभियोजन की प्रतिरक्षा करने बजाए अभियुक्त को अवसर दिलाने के पक्ष में गलती करना सुरक्षित होगा। न्यायालय को ये ध्यान में रखना चाहिए की ऐसी विवेकाधीन शक्ति का अनुचित या मनमाने ढंग से प्रयोग करने से अवांछनीय परीणाम हो सकते हैं।

(एल) अतिरिक्त साक्ष्य को किसी भी पक्ष के विरूद्ध छद्म रूप में या मामले की प्रकृति को बदलने के लिए प्राप्त नहीं किया जाना चाहिए

(एम) शक्ति का प्रयोग यह ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए कि जो साक्ष्य प्रस्तुत किए जाने की संभवाना है, वह शामिल मुद्दे के लिए प्रासंगिक होगा और यह भी सुनिश्चित करेगा की दूसरे पक्ष को खण्डन का अवसर दिया जाए।

(एन) धारा 311 सीआरपीसी की शक्ति का प्रयोग न्यायालय द्वारा केवल मजबूत और वैध कारणों से न्याय के उदेश्यों को पूरा करने के लिए लागू किया जाना चाहिए और इसे ध्यानपूर्वक, सावधानी से और एहतियाद के साथ प्रयोग किया जाना चाहिए। न्यायालय को यह ध्यान में रखना चाहिए की निष्पक्ष सुनवाई में आरोपी, पीडित और समाज का हित शामिल है और इसलिए संबंधित व्यक्तियों को निष्पक्ष और उचित अवसर प्रदान करना एक संवैधानिक लक्ष्य होने के साथ साथ एक मानवीय लक्ष्य भी होना चाहिए।

24. उपरोक्त सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, जब हम मामले की जांच करते है तो शुरू में ही, यह कहना होगा कि उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश पारित करते समय उन प्रमुख उद्देश्यों को पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया है जिनके साथ धारा 311 सीआरपीसी का प्रावधान कानून की पुस्तक में लाया गया हैं। जैसा की अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने सही तर्क दिया है, सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि जब मुकदमा विचारण न्यायालय की पकड में था, जिसके पास अपीलकर्ता को

सुनने का हर अवसर था, राज्य, साथ ही दूसरे प्रतिवादी ने भी सुनवाई नही की थी। यह सत्यापित करने की जहमत उठाई गई की क्या अपीलकर्ता जो, आपराधिक मुकदमे का सामना कर रहा था, उसे उच्च न्यायालय की कार्यवाही में एक पक्ष के रूप में शामिल किया गया था, आदेश के अवलोकन से पता चलता है की ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने परिणामों की परवाह किए बिना पहली ही सुनवाई की तारीख पर आदेश पारित कर दिया हैं। यह आदेश विद्वान सेशन न्यायाधीश द्वारा निपटाए गए किसी भी मुद्दे को प्रतिबंबित नही करता है। यहा दूसरे प्रतिवादी पी.ड.9 की पुनः परीक्षा करने की मांग में उत्तरदाताओं के आवेदन को खारीज कर दिया गया है। हालांकी इस अपील में मामले को वापस उच्च न्यायालय में भेज कर वापिस आदेश पारित किया जा सकता था, समय कारक काे ध्यान में रखते हुए और चुकी अंतिम आदेश पारित करने के लिए पूरी साम्रगी रिकॉर्ड पर उपलब्ध हैं और चूकी सभी पक्ष हमारे सामने थे, इसलिए सेशन न्यायाधीश के आदेश दिनांक 18-11-2009 के आदेश की शुद्धता की जांच की जा सकती है और वर्तमान आपराधिक मामले किसी न किसी तरह से अंतिम आदेश पारित किया जा सकता है।

25. इस दृष्टिकोण के साथ, जब हम बुनियादी तथ्यों की जांच करते हैं, तो हम पाते हैं कि विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा नोट के किए गए अनुसार वे निर्विवाद रूप से दूसरे प्रतिवादी द्वारा दिनांक 08-07-1999 को प्रकरण सं.71/1999 में, पुलिस स्टेशन में दर्ज की गई। शिकायत के

विपरित है, जिसमें अपराध अंतर्गत धारा 324/307/34 भा.द.स. सपठित धारा 27 आयुध अधिनियम में प्रकरण दर्ज किया गया था। डॉक्टर की रिपोर्ट के आधार पर दिनांक 31-10-1999 को धारा 324/307/34 भा.द.स. के अंतर्गत आरोप पत्र सं. 127/99 प्रस्तुत किया गया और धारा 27 आयुध अधिनियम के तहत कोई आरोप नहीं लगाया गया। उक्त मामले की सुनवाई चल रही थी और पक्षकार भाग ले रहे थे। मुकदमे के दौरान घटना की तारीख से लगभग आठ साल बाद दिनांक 16-03-2007 को दूसरे प्रतिवादी पी.ड.9 से परीक्षा की बारी औई। दूसरे प्रतिवादी ने अपनी साक्ष्य मे स्पष्ट बयान दिया की उसने पुलिस को कभी कोई बयान नही दिया। घटना की दिनांक को उसे नही पीटा और ना ही उसे कोई गोली लगी थी। इसके अलावा उसने स्पष्ट कहा की उसे जो चोटे लगी है, वह शौचालय बनाने के लिए खोदे गए गडडे में गिरने के कारण लगी है, जहां कुछ उपकरणों के कारण उसे चोट लगी है। उसने स्पष्ट बयान भी दिया की उसके बेटे पी.ड.4 और पी.ड.5 बबलु और मुन्नाकुमार घटना स्थल पर मौजूद नही थे क्योंकि एक कुशालगंज के छात्रावास में रह रहा था और दूसरा घटना की तारीख और समय पर अर्थात दिनांक 07-07-1999 को शाम लगभग 5 बजे राॅची में था। जब की दूसरे प्रतिवादी के उक्त विवरण को विचारण न्यायालय द्वारा दिनांक 16-03-2007 को दर्ज किया जाना बताया गया था, और अभियोजन के साक्ष्य को दिनांक 04-04-2007 को

बंद कर दिया गया था, ऐसा लगता है की बचाव साक्ष्य भी शुरू हो गया है।

26. उक्त परिदृश्य में, दूसरे प्रतिवादी ने धारा 311 सीआरपीसी के तहत हस्तगत प्रार्थना पत्र दायर किया। दिनांक 24-08-2007 को, यानी विचारण न्यायालय द्वारा उसकी परीक्षा के लगभग पाँच महीने बाद। उक्त आवेदन दायर करते समय, दूसरे प्रतिवादी ने दावा किया की दिनांक 16-03-2007 को दिया गया उसका साक्ष्य उसकी अपनी स्वतंत्र ईच्छा और पसंद से नहीं था, बल्कि अपीलार्थी सहित अभियुक्त व्यक्तियों के कहने पर धमकी और जबरदस्ती के कारण था। दूसरे प्रतिवादी की ओर से यह तर्क दिया गया है कि अभियुक्त व्यक्तियों ने उसे खत्म करने की हद तक जाकर धमकी दी थी और ऐसी धमकी उसे 15.3.2007 को दी गई थी, जब अभियुक्त द्वारा दो अज्ञात व्यक्तियों के साथ उसके गेंहू के खेत से उसका अपहरण कर लिया था।

27. विचारण न्यायालय ने अपने आदेश दिनांक 18-11-2009 में उपरोक्त सभी कारणों की जांच करते हुए निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया हैः

"या तो न्यायालय में उसने अपनी साक्ष्य के समय या अपनी साक्ष्य के बाद उसने न्यायालय या किसी अन्य अधिकारी अर्थात सीजेएम या किसी पुलिस अधिकारी से कभी कोई शिकायत नही की कि अभियुक्तों ने

उस पर साक्ष्य देने के लिए कोई दबाव डाला था अभियोजन पक्ष के प्रति शत्रुतापूर्ण और अभियोजन मामले को आगे बढ़ाने के लिए उन्होंने यह भी तर्क दिया है कि उन्होंने इस संबंध में कोई हलफनामा या मामला भी दायर नहीं किया हैं। बल्कि जब अभियुक्त बिंदेश्वर यादव द्वारा दिनांक 30-05-2007 को दी गई रिपोर्ट के आधार पर खेजेरसराय थाना के प्रकरण सं. 78/2007 दिनांक 07-06-2008 पुलिस द्वारा दर्ज किया गया तो मुखबीर सुरेश प्रसाद ने यह याचिका दायर की है और ऐसी ही याचिका उन्हें अतिरिक्त लोक अभियोजक के माध्यम से दायर प्राप्त हुई है जिसमे खड़े होने के लिए कोई पैर नहीं हैं और यह खारीज किए जाने योग्य हैं। उन्होंने अपने तर्क के समर्थन में खिजेरसराय थाना प्रकरण सं.78/2007 की एक प्रतिलिपी भी प्रस्तुत की हैं।

28. अभियुक्त की और से दी गई उपरोक्त दलीलो पर ध्यान देने के बाद विचारण न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया हैः

मुखबीर सुरेश प्रसाद (पीडब्लू-9) की गवाही के बाद दिनांक 16.03.2007 को न्यायालय अपर सेशन न्यायाधीश एफ.टी.सी.-5 ने अतिरिक्त विद्वान अभियोजन अधिकारी को अवसर देने के बाद दिनांक 04.04.2007 को अभियोजन साक्ष्य बंद की गई। अतिरिक्त अभियोजन अधिकारी को दिनांक 26-03-2007 को और दिनांक 04-04-2007 को शेष गवाह पेश करने के

लिए कहा गया, जो वह इस आधार पर नही कर सके कि माननीय न्यायालय द्वारा दिया गया समय समाप्त हो गया है।

सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधिपतियों ने दोहियाभाई बनाम राज्य ए. आई. और. 1964 एससी 1563 में अभिनिर्धारित किया है कि "किसी गवाह से पुनः परीक्षण का अधिकार जिरह के समापन के बाद ही उत्पन्न होता है और धारा 138 कहती है कि यह जिरह के दौरान दिए गए उनसे साक्ष्य के किसी भी हिस्से के स्पष्टीकरण के लिए निर्देशित किया जाएगा जो प्रतिकूल रूप में भी समझा जाने में सक्षम हैं। उसका अपना पक्ष इसका उद्देश्य मुख्य परीक्षा और जिरह में दिए गए बयानों के बीच विसंगतियाे को दूर करने या जिरह में अनजाने में दिए गए किसी बयान को स्पष्ट करने या गवाही मे किसी भी अस्पष्टता या जिरह द्वारा साक्ष्य पर संदेह हो दूर करने का अवसर देना है। जहाँ कोई अस्पष्टता नहीं है या जहाँ समझाने के लिए कुछ भी नहीं है, वहां गवाह को पिछले बयान के प्रभाव में परिवर्तन देने के एक मात्र उद्देश्य से पुनः परीक्षण में रखा गया प्रश्न नही पुछा जाना चाहिए। परीक्षा के दौरान (धारा 142)। धारा 154 अपने दायरे में व्यापक है और न्यायालय किसी व्यक्ति को गवाह को बुलाने की अनुमति दे सकती है, लेकिन पुनः परीक्षा के चरण में प्रतिपरीक्षा की प्रकृति में सवाल पूछ सकती हैं, बशर्ते की वह प्रतिद्वंद्वी पक्ष को गवाह से प्रतिपरीक्षा करने का अवसर दे। माननीय उच्च न्यायालय द्वारा तय किए गए उपरोक्त मामलो में उदभूत सिद्धांतो और पी.ड.9 साक्ष्य के साथ साथ पी.ड.9 और अतिरिक्त लोक

अभियोजक की और से दायर दो पूर्वोक्त दायर याचिकाआे से यह स्पष्ट है की पी.ड.9 की जिरह में उसकी मुख्य परीक्षा के कोई सबूत नही हैं। जिसे धारा 138 साक्ष्य अधिनियम या धारा 311 सीआरपीसी के माध्यम से पी.ड.9 की पुनः परीक्षा के माध्यम से समझाया या स्पष्ट किया जा सके। यह भी स्पष्ट है की पी.ड.9 ने अभियुक्त द्वारा उसके विरूद्ध मामला दर्ज करने के बाद याचिका दायर की है। ऐसे में दोनों तत्काल याचिका सुनवाई योग्य नही है। लेकिन क्या पीडब्लू-9 के पक्षद्रोही होने के संबंध में परीक्षण धारा 145 के आधार पर ही किया गया होगा। जैसा की अभियोजन पक्ष के अन्य गवाहो ने अभियोजन के मामले का समर्थन किया है। अनुसंधान अधिकारी की गई साक्ष्य मामले के न्यायापूर्ण निस्तारण के लिए पर्याप्त होगी।

29. हमने पाया की धारा 311 सीआरपीसी के तहत दायर प्रार्थना पत्र पर निर्णय लेते समय विचारण न्यायालय द्वारा नोट किए गए कारण और उसके द्वारा निकाले गए निष्कर्ष सभी उचित और न्याय संगत है। हमें धारा 311 सीआरपीसी के तहत न्यायालय की मांगते समय दूसरे प्रतिवादी के आवेदन में कोई प्रमाणिकता नही मिली। उसकी पुनः परीक्षण के लिए केवल यह आरोप लगाया की पहले अवसर पर वह अपीलार्थी और अन्य अभियक्तगण के कहने पर दबाव और धमकी के तहत पक्षद्रोही हो गया था। यह बिल्कुल स्पष्ट था कि शिकायत, जो अपीलार्थी के कहने पर बाद की घटना पर आधारित थी, जो 30.5.2007 को हुई थी जिसके परिणामस्वरूप

खिजेरसराय पुलिस थाने में प्रकरण सं.78/2007 में एफआईआर दर्ज की गई थी। ऐसा प्रतीत होता है की दूसरा प्रतिवादी बाद में विचार करके धारा 311 सीआरपीसी का प्रार्थना पत्र पेश कर न्यायालय के समक्ष आया है। यदि वास्वत में अपीकर्ता और अन्य अभियुक्त के कहने पर उसके जीवन को खतरा था जैसा की नीचे की अदालत ने ठीक ही कहा है, तो यह ज्ञात नही था की उसके खिलाफ इस तरह की जबरदस्ती और अनुचित प्रभाव का तत्काल कोई संदर्भ क्यों नही किया गया था। अपीलकर्ता के कहने पर, जब उसके पास विद्वान विचारण न्यायाधीश या पुलिस अधिकारियों या किसी भी अभियोजन एजेंसी के सामने इसका उल्लेख करने का हर अवसर था। धारा 311 द.प्र.स. के तहत दायर उत्तरदाताओं के आवेदन को खारिज करते समय, दूसरे प्रतिवादी द्वारा इस तरह का उदासीन रूख और चुप्पी बनाए रखी गई और उसकी साक्ष्य में विचारण न्यायालय के समक्ष दिया गया स्पष्ट बयान उचित परिपेक्ष में था। हमारी सुविचारित राय में विचारण न्यायालय को साक्ष्य प्रस्तुत करते समय दूसरे प्रतिवादी के आचरण का निरीक्षण करने का अवसर मिला, जिसने विचारीण न्यायालय को उक्त निष्कर्ष पर पहुचने के लिए प्रेरित किया और जो पारित आदेश की शुद्धता की जांच करते समय अधिक विश्वसनीयता का हकदार है।

30. उपरोक्त निष्कर्ष के आलोक में, ऊपर निर्धारित विभिन्न सिद्धांतो को लागू करते हुए, हम आश्वस्त हैं कि उच्च न्यायालय के समक्ष लगाए गए विचारण न्यायालय के आदेश में अपीलकर्ता के पीठ पीछे किसी भी

हस्तक्षेप की आवश्यकता नही है। अतः अपील सफल होती है। उच्च न्यायालय द्वारा आपराधिक विविध प्रकरण 12454/2010 में दिनांक 09-12-2010 को पारित आक्षेपित आदेश को निरस्त किया जाता है। विचारण न्यायालय का आदेश बाहर रखा गया है। विचारण न्यायालय मुकदमे को आगे बढाएगा। इस न्यायालय द्वारा दिनांक 07-03-2011 के आदेश में दिया गया स्थगन निरस्त किया जाता है। विचारण न्यायालय प्रकरण को उसी प्रक्रम से आगे बढाएगा जहा उसे छोडा गया था और इसे शीघ्रता से समाप्त करेगा। अधिमानतः इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तारीख से तीन महीने के भीतर इसे शीघ्रता से समाप्त करें।

अपील की अनुमति दी गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी नुकेश भगोरा (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।